ॐ

अष्टावक्र गीता

मूल संस्कृत · शब्दार्थ · हिंदी अनुवाद · विस्तृत व्याख्या

ज्योति यात्रा प्रकाशन
jyotiyatra.in

अष्टावक्र गीता

राजा जनक और ऋषि अष्टावक्र का संवाद

सम्पूर्ण २९८ श्लोक, २० प्रकरण

jyotiyatra.in

मूल पाठ: संस्कृत विकिस्रोत (सार्वजनिक) · अनुवाद एवं व्याख्या © ज्योति यात्रा २०२६

अनुक्रमणिका

भूमिका	४
ऋषि अष्टावक्र की जन्म-कथा	६
जनक की सभा और गुरु-शिष्य का मिलन	८
इस पुस्तक को कैसे पढ़ें	१०
प्रकरण १ — आत्मानुभवोपदेश — मुक्ति का पहला पाठ (२० श्लोक)	१२
प्रकरण २ — आत्मानुभवोल्लास — जनक का जागरण (२५ श्लोक)	५३
प्रकरण ३ — आक्षेपोपदेश — गुरु की कसौटी (१४ श्लोक)	१०४
प्रकरण ४ — शिष्यप्रोक्तानुभवोल्लास — ज्ञानी की लीला (६ श्लोक)	१३३
प्रकरण ५ — लयचतुष्टय — विलय के चार द्वार (४ श्लोक)	१४६
प्रकरण ६ — उत्तरचतुष्टय — न त्याग, न ग्रहण, न लय (४ श्लोक)	१५५
प्रकरण ७ — शिष्यप्रोक्तानुभवपञ्चक — अनंत सागर का गीत (५ श्लोक)	१६४
प्रकरण ८ — बन्धमोक्षव्यवस्था — बंधन और मुक्ति की कसौटी (४ श्लोक)	१७५
प्रकरण ९ — निर्वेदाष्टक — संसार से शांत उदासीनता (८ श्लोक)	१८४
प्रकरण १० — उपशमाष्टक — शांति के आठ सूत्र (८ श्लोक)	२०१
प्रकरण ११ — ज्ञानाष्टक — निश्चय के आठ रूप (८ श्लोक)	२१८
प्रकरण १२ — एवमेवाष्टक — मैं ऐसे ही स्थित हूँ (८ श्लोक)	२३५
प्रकरण १३ — यथासुखसप्तक — सहज सुख में जीना (७ श्लोक)	२५२
प्रकरण १४ — शान्तिचतुष्टय — इच्छाओं के गलने की शांति (४ श्लोक)	२६७
प्रकरण १५ — तत्त्वोपदेशविंशतिक — तत्त्व के बीस सूत्र (२० श्लोक)	२७६
प्रकरण १६ — विशेषोपदेश — सब भूल जाने की कला (११ श्लोक)	३१७
प्रकरण १७ — तत्त्वस्वरूपविंशतिक — तत्त्वज्ञ के बीस लक्षण (२० श्लोक)	३४०
प्रकरण १८ — शान्तिशतक — शांति के सौ सूत्र (१०० श्लोक)	३८१
प्रकरण १९ — आत्मविश्रान्त्यष्टक — अपनी महिमा में विश्राम (८ श्लोक)	५८२
प्रकरण २० — जीवन्मुक्तिचतुर्दशक — मुक्त की अंतिम घोषणा (१४ श्लोक)	५९९
शब्दकोश	६२८
पाठ-टिप्पणी एवं आभार	६३४

jyotisarit.in

भूमिका

◆

भारत की आध्यात्मिक परंपरा में अनेक गीताएँ हैं — श्रीमद्भगवद्गीता, अवधूत गीता, रिभु गीता, उद्धव गीता। इन सबके बीच अष्टावक्र गीता एक अनोखा स्थान रखती है। यह छोटी है — केवल २९८ श्लोक — पर इसकी गहराई अथाह है। इसमें न कोई युद्धभूमि है, न कोई लंबी कथा, न कर्मकांड का विधान। इसमें केवल दो व्यक्ति हैं — एक युवा ऋषि और एक जिज्ञासु राजा — और उनके बीच सत्य की सबसे सीधी, सबसे निर्भीक बातचीत।

राजा जनक तीन प्रश्न पूछते हैं — ज्ञान कैसे प्राप्त होता है? मुक्ति कैसे होती है? वैराग्य कैसे मिलता है? और ऋषि अष्टावक्र उत्तर में कोई साधना-पद्धति नहीं बताते। वे कहते हैं — तुम पहले से ही मुक्त हो; तुम शरीर नहीं, मन नहीं, कर्ता नहीं, भोक्ता नहीं; तुम शुद्ध चैतन्य, साक्षी, एक और अविनाशी हो। इसे जान लो, और अभी, इसी क्षण, सुखी हो जाओ।

यही इस ग्रंथ की विशेषता है। अधिकतर शास्त्र मनुष्य को एक लंबी यात्रा पर ले जाते हैं — पहले यह करो, फिर वह करो, बरसों के अभ्यास के बाद लक्ष्य मिलेगा। अष्टावक्र गीता कहती है — कोई यात्रा नहीं, क्योंकि तुम पहले से ही वहाँ हो जहाँ पहुँचना था। इसलिए इसे अद्वैत वेदांत का सबसे शुद्ध और सबसे सीधा ग्रंथ माना जाता है।

इस गीता का रचना-काल निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है। परंपरा इसे ऋषि अष्टावक्र और राजा जनक के संवाद के रूप में मानती है, जिनकी कथा महाभारत के वनपर्व में भी आती है। विद्वानों के बीच इसकी तिथि को लेकर अलग-अलग मत हैं। पर इसका संदेश किसी काल से बँधा नहीं; वह आज भी उतना ही ताज़ा है जितना हज़ारों वर्ष पहले था।

यह ग्रंथ बीस प्रकरणों में बँटा है। कुछ प्रकरणों में अष्टावक्र बोलते हैं — उपदेश देते हैं, परीक्षा लेते हैं, ज्ञानी के लक्षण बताते हैं। कुछ प्रकरणों में जनक बोलते हैं — अपने जागरण का

आश्चर्य, अपनी शांति, अपना विश्राम प्रकट करते हैं। गुरु के वचन और शिष्य के अनुभव — इन दोनों के मेल से यह ग्रंथ एक जीवंत यात्रा बन जाता है, जो प्रश्न से शुरू होकर पूर्ण मौन पर समाप्त होती है।

ज्योति यात्रा प्रकाशन का यह संस्करण परिवारों के लिए तैयार किया गया है। हर श्लोक के साथ मूल संस्कृत, उसका रोमन लिप्यंतरण, अन्वय (गद्य-क्रम), शब्दार्थ, हिंदी अनुवाद, विस्तृत भावार्थ, एक व्यावहारिक प्रयोग और एक चिंतन-प्रश्न दिया गया है। मूल संस्कृत पाठ संस्कृत विकिस्रोत के सार्वजनिक पाठ पर आधारित है, जहाँ आवश्यक हुआ वहाँ प्रचलित शुद्ध पाठ के अनुसार छोटे संशोधन किए गए हैं। अनुवाद और व्याख्या ज्योति यात्रा की अपनी मौलिक रचना है।

हमारा प्रयास रहा है कि गहरी से गहरी बात भी सरल, घरेलू हिंदी में, रोज़मर्रा के उदाहरणों के साथ कही जाए — ताकि दादा-दादी से लेकर युवा पीढ़ी तक, हर कोई इसे पढ़ सके, समझ सके और अपने जीवन में उतार सके। यदि इस पुस्तक का एक भी श्लोक आपके भीतर शांति का एक दीया जला दे, तो हमारा श्रम सफल है।

jyotiyatra.in

ऋषि अष्टावक्र की जन्म-कथा

◆

प्राचीन काल में उद्दालक नाम के एक महान ऋषि थे, जिनके आश्रम में अनेक शिष्य वेद पढ़ते थे। उनके शिष्यों में कहोड़ नाम का एक ब्राह्मण भी था, जो बड़ी श्रद्धा से गुरु की सेवा करता था। उसकी निष्ठा से प्रसन्न होकर उद्दालक ने अपनी पुत्री सुजाता का विवाह कहोड़ से कर दिया। उद्दालक के पुत्र श्वेतकेतु भी उसी आश्रम में पले-बढ़े, जिनकी कथा छांदोग्य उपनिषद में 'तत्त्वमसि' के उपदेश के साथ प्रसिद्ध है।

समय आने पर सुजाता गर्भवती हुई। कहा जाता है कि गर्भ में ही वह बालक इतना ज्ञानवान था कि अपने पिता के वेद-पाठ को ध्यान से सुनता था। एक दिन जब कहोड़ रात में वेद-पाठ कर रहे थे, तो गर्भ से एक आवाज़ आई — 'पिताजी, आप रात भर पाठ करते हैं, पर उच्चारण ठीक नहीं होता।' शिष्यों के सामने अपने अजन्मे पुत्र से यह सुनकर कहोड़ क्रोधित हो गए।

क्रोध में उन्होंने शाप दे दिया — 'तू गर्भ में ही इतना टेढ़ा बोलता है, तो तू आठ स्थानों से टेढ़ा होकर जन्म लेगा।' इसी शाप के कारण जब बालक का जन्म हुआ, तो उसका शरीर आठ जगह से मुड़ा हुआ था। इसीलिए उसका नाम पड़ा — 'अष्टावक्र', यानी आठ जगह से वक्र (टेढ़ा)।

इस बीच, घर की आर्थिक स्थिति कठिन थी। सुजाता के कहने पर कहोड़ धन की आशा में विदेह राज्य के राजा जनक की सभा में गए, जो विद्वानों का बहुत आदर करते थे। पर वहाँ बंदी नाम का एक प्रकांड विद्वान था, जो शास्त्रार्थ में ब्राह्मणों को हराकर उन्हें जल में डुबवा देता था। कहोड़ भी उससे हार गए और जल में डुबो दिए गए।

जब अष्टावक्र बड़े हुए, तो वे अपने नाना उद्दालक को ही पिता और मामा श्वेतकेतु को भाई समझते थे। बारह वर्ष की आयु में एक दिन जब वे उद्दालक की गोद में बैठे थे, तो श्वेतकेतु ने

उन्हें हटाते हुए कहा — 'यह तुम्हारे पिता की गोद नहीं है।' दुःखी होकर अष्टावक्र माँ के पास गए, और तब सुजाता ने उन्हें पिता की पूरी कथा सुनाई।

सत्य जानकर बालक अष्टावक्र ने निश्चय किया कि वे जनक की सभा में जाकर बंदी को शास्त्रार्थ में हराएँगे। वे श्वेतकेतु के साथ मिथिला पहुँचे। द्वारपाल ने बालक जानकर रोका, पर अष्टावक्र ने कहा — 'ज्ञान आयु से नहीं, बुद्धि से बड़ा होता है। सिर के बाल सफ़ेद होने से कोई वृद्ध नहीं होता; जो ज्ञानी है, वही वृद्ध है।' उनकी बातों से प्रभावित होकर उन्हें सभा में प्रवेश मिला।

सभा में बंदी और अष्टावक्र के बीच अद्भुत शास्त्रार्थ हुआ। महाभारत के अनुसार दोनों ने एक से तेरह तक की संख्याओं पर बारी-बारी से गूढ़ वचन कहे। तेरह की संख्या पर बंदी अटक गया, और अष्टावक्र ने उस श्लोक को पूरा करके उसे पराजित कर दिया। तब बंदी ने रहस्य खोला कि वह जल के देवता वरुण का पुत्र है, और उसने हारे हुए ब्राह्मणों को डुबोया नहीं, बल्कि वरुण के यज्ञ में भेजा था। यज्ञ पूरा हो चुका था, और कहोड़ सहित सभी ब्राह्मण जल से लौट आए।

पुत्र की विजय से प्रसन्न कहोड़ ने उसे आशीर्वाद दिया और समंगा नदी में स्नान करने को कहा। कहा जाता है कि उस नदी में स्नान करते ही अष्टावक्र का शरीर सीधा हो गया। इस कथा में एक गहरा संदेश छिपा है — शरीर टेढ़ा हो सकता है, पर ज्ञान सीधा होता है; और जो सत्य जानता है, उसे किसी की आयु, रूप या पद से नहीं परखा जा सकता।

jyotiyatra.in

जनक की सभा और गुरु-शिष्य का मिलन

◆

राजा जनक विदेह राज्य के शासक थे, जिसकी राजधानी मिथिला थी। 'जनक' उस वंश के राजाओं की उपाधि थी, और इसी वंश में आगे चलकर माता सीता का जन्म हुआ, जिन्हें 'जानकी' और 'वैदेही' कहा जाता है। जनक अपने ज्ञान, न्याय और विद्वानों के प्रति आदर के लिए प्रसिद्ध थे। उपनिषदों में भी उनकी सभा में होने वाले महान शास्त्रार्थों का वर्णन मिलता है।

लोक-परंपरा में एक कथा बहुत प्रसिद्ध है। एक बार राजा जनक की सभा में विद्वानों का बड़ा समागम था। जब बालक अष्टावक्र अपने टेढ़े-मेढ़े शरीर के साथ सभा में आए, तो उनकी अटपटी चाल देखकर कई सभासद हँस पड़े। अष्टावक्र भी ज़ोर से हँसे। जनक ने पूछा — 'ये लोग तो आपको देखकर हँसे, पर आप क्यों हँसे?'

अष्टावक्र ने उत्तर दिया — 'मैं सोचकर आया था कि यह ज्ञानियों की सभा होगी। पर यहाँ तो सब लोग केवल चमड़ी और हड्डियों के पारखी हैं। ये शरीर देखते हैं, आत्मा नहीं। मंदिर के टेढ़ा होने से आकाश टेढ़ा नहीं होता, और घड़े के टूटे होने से उसमें भरा आकाश नहीं टूटता।' यह सुनकर सभा में सन्नाटा छा गया, और जनक उस बालक के चरणों में झुक गए।

यह कथा, चाहे इतिहास हो या लोक-स्मृति, अष्टावक्र गीता के पूरे संदेश को एक दृश्य में समेट देती है। जो शरीर को 'मैं' मानता है, वह हँसता है, रोता है, डरता है। जो शरीर के पार देखता है, वह हर जगह उस एक चेतना को देखता है। जनक में यह ग्रहणशीलता थी — एक राजा होकर भी उन्होंने एक बालक को गुरु माना, क्योंकि उन्होंने शरीर नहीं, ज्ञान देखा।

इसके बाद जनक ने अष्टावक्र से वे तीन प्रश्न पूछे, जिनसे यह गीता शुरू होती है। एक और लोक-कथा कहती है कि जनक ने एक बार सपना देखा कि वे राज्य खोकर भिखारी बन गए हैं, भूखे भटक रहे हैं। जागने पर वे उलझन में पड़ गए — 'वह सच था या यह सच है?' और

अष्टावक्र ने उत्तर दिया — 'न वह सच था, न यह; सच वह है जो दोनों को देख रहा था।' यही इस ग्रंथ की धुरी है — साक्षी।

जनक को 'विदेह' कहा जाता है — देह में रहते हुए भी देह से मुक्त। वे राज्य चलाते थे, न्याय करते थे, यज्ञ करवाते थे, फिर भी भीतर से पूर्ण मुक्त थे। अष्टावक्र गीता का सबसे बड़ा संदेश यही है कि मुक्ति के लिए घर-संसार छोड़ना ज़रूरी नहीं; भीतर की पकड़ छोड़ना ज़रूरी है। जनक इसका जीवंत प्रमाण हैं, और इसीलिए यह ग्रंथ गृहस्थों के लिए विशेष रूप से प्रिय है।

ॐ
jyotiyatra.in

इस पुस्तक को कैसे पढ़ें

◆

अष्टावक्र गीता उपन्यास की तरह एक बार में पढ़ने की पुस्तक नहीं है। यह धीरे-धीरे, एक-एक श्लोक पर ठहरकर, चखने की पुस्तक है। हमारा सुझाव है कि आप प्रतिदिन एक या दो श्लोक पढ़ें — सुबह शांत मन से, या रात को सोने से पहले। इस तरह यह पुस्तक लगभग पाँच महीनों की एक आंतरिक यात्रा बन जाएगी।

हर श्लोक दो पृष्ठों में है, और उसके कई हिस्से हैं। सबसे ऊपर मूल संस्कृत श्लोक है — इसे धीरे-धीरे, ज़ोर से पढ़ें, भले ही अर्थ पूरा न समझें; संस्कृत की ध्वनि में अपनी शक्ति है। उसके नीचे रोमन लिप्यंतरण है, जो सही उच्चारण में सहायता करेगा। फिर 'अन्वय' — श्लोक के शब्दों को सामान्य गद्य-क्रम में रखा गया है, ताकि वाक्य का ढाँचा समझ में आए।

'शब्दार्थ' में हर महत्वपूर्ण शब्द का अर्थ दिया गया है। इससे आप धीरे-धीरे संस्कृत के मूल शब्दों से परिचित हो जाएँगे — आत्मा, साक्षी, बोध, मुक्ति, निर्विकल्प। 'हिंदी अनुवाद' श्लोक का सीधा, ईमानदार अर्थ है। और 'भावार्थ एवं व्याख्या' में उस श्लोक का गहरा अर्थ, रोज़मर्रा के उदाहरणों के साथ, और पिछले-अगले श्लोकों से उसका संबंध समझाया गया है।

हर श्लोक के अंत में दो डिब्बे हैं। 'जीवन में प्रयोग' — एक छोटा, व्यावहारिक अभ्यास, जो आप उसी दिन कर सकते हैं। ज्ञान केवल पढ़ने से नहीं, जीने से पकता है। और 'चिंतन' — एक प्रश्न, जिसे आप दिन भर अपने साथ रख सकते हैं। इस प्रश्न का कोई 'सही' उत्तर नहीं; इसका उद्देश्य आपको अपने भीतर देखने के लिए प्रेरित करना है।

एक महत्वपूर्ण सावधानी — अष्टावक्र गीता बहुत ऊँचे स्तर से बोलती है। इसमें कई बार कहा गया है कि ध्यान, अभ्यास, नियम, शास्त्र — सब छोड़ दो। यह वचन उस व्यक्ति के लिए है जिसका मन पहले से शांत और परिपक्व है। स्वयं अष्टावक्र अठारहवें प्रकरण में चेतावनी देते

हैं कि अपरिपक्व व्यक्ति अभ्यास छोड़ दे, तो उसका मन और भटकने लगता है। इसलिए अपनी पूजा, ध्यान, सेवा और सदाचार को इस ग्रंथ के नाम पर कभी न छोड़ें; बल्कि इस ग्रंथ से उनमें और गहराई लाएँ।

यह पुस्तक परिवार के साथ पढ़ने के लिए भी बहुत उपयुक्त है। सप्ताह में एक दिन परिवार के साथ बैठकर एक श्लोक पढ़ें, उसके चिंतन-प्रश्न पर बात करें — बच्चे, बड़े, बुज़ुर्ग, सबके उत्तर अलग होंगे, और सब कुछ नया सीखेंगे। पुस्तक के अंत में एक शब्दकोश भी दिया गया है, जिसमें बार-बार आने वाले संस्कृत शब्दों के अर्थ हैं।

अंत में, इस पुस्तक को बुद्धि से ही नहीं, हृदय से पढ़ें। अष्टावक्र स्वयं कहते हैं — 'श्रद्धस्व तात श्रद्धस्व', प्रिय, श्रद्धा करो। शब्दों के पीछे के मौन को सुनें। और जब कोई श्लोक भीतर कुछ छू ले, तो पुस्तक बंद करके कुछ पल उस अनुभव में ठहरें। वही ठहराव इस पुस्तक का असली फल है।

jyotiyatra.in

प्रकरण १

आत्मानुभवोपदेश — मुक्ति का पहला पाठ



पहला प्रकरण पूरी अष्टावक्र गीता का बीज है। राजा जनक तीन सीधे प्रश्न पूछते हैं — ज्ञान कैसे मिले, मुक्ति कैसे हो, वैराग्य कैसे आए। ऋषि अष्टावक्र कोई लंबी साधना-विधि नहीं बताते; वे सीधे कहते हैं — तुम शरीर नहीं हो, तुम मन नहीं हो, तुम साक्षी चैतन्य हो, और यह जानते ही तुम अभी, इसी क्षण मुक्त हो। इस प्रकरण के बीस श्लोक इसी एक सत्य को अलग-अलग कोणों से दिखाते हैं।

jyotiyatra.in

जनक उवाच

कथं ज्ञानमवाप्नोति कथं मुक्तिर्भविष्यति ।
वैराग्यं च कथं प्राप्तं एतद् ब्रूहि मम प्रभो ॥

kathaṃ jñānamavāpnoti kathaṃ muktirbhaviṣyati|
vairāgyaṃ ca kathaṃ prāptaṃ etad brūhi mama prabho||

अन्वय

प्रभो! (पुरुषः) ज्ञानं कथम् अवाप्नोति? मुक्तिः कथं भविष्यति? वैराग्यं च कथं प्राप्तम् (भवति)? एतत् मम ब्रूहि।

शब्दार्थ

कथम् — कैसे
अवाप्नोति — प्राप्त करता है
भविष्यति — होगी
प्राप्तम् — प्राप्त होता है
ब्रूहि — कहिए
प्रभो — हे स्वामी
ज्ञानम् — आत्मज्ञान
मुक्तिः — बंधन से छुटकारा
वैराग्यम् — विषयों से अनासक्ति
एतत् — यह
मम — मुझसे

हिंदी अनुवाद

राजा जनक ने पूछा — हे प्रभो! मनुष्य को ज्ञान कैसे प्राप्त होता है? मुक्ति कैसे होगी? और वैराग्य कैसे मिलता है? यह मुझे बताइए।

jyotiyatra.in

भावार्थ एवं व्याख्या

अष्टावक्र गीता एक प्रश्न से आरम्भ होती है, और वह प्रश्न किसी साधारण जिज्ञासु का नहीं, मिथिला के राजा जनक का है — जिनके पास राज्य, वैभव, सम्मान सब कुछ है। यही इस ग्रंथ की पहली शिक्षा है: बाहर का सब कुछ पा लेने के बाद भी भीतर का प्रश्न शेष रहता है। जनक का प्रश्न किसी अभाव से नहीं, परिपूर्णता के बीच उठी प्यास से जन्मा है।

जनक तीन बातें पूछते हैं — ज्ञान, मुक्ति और वैराग्य। ध्यान देने योग्य है कि वे पूजा-विधि, स्वर्ग-प्राप्ति या सिद्धियों के बारे में नहीं पूछते। वे सीधे मूल पर आते हैं। ज्ञान का अर्थ यहाँ पुस्तकों की जानकारी नहीं, स्वयं के वास्तविक स्वरूप का अनुभव है। मुक्ति का अर्थ मृत्यु के बाद किसी लोक में जाना नहीं, बल्कि अभी, इसी जीवन में दुःख और बंधन से छूट जाना है। और वैराग्य का अर्थ घर छोड़कर भागना नहीं, बल्कि वस्तुओं के बीच रहते हुए भी उनसे बँधे न रहना है।

परंपरा में इन तीनों का क्रम भी अर्थपूर्ण माना गया है। सामान्यतः साधक पहले वैराग्य, फिर ज्ञान और अंत में मुक्ति की बात करता है। जनक ने ज्ञान को पहले रखा — मानो वे संकेत दे रहे हों कि सच्चा ज्ञान होते ही मुक्ति और वैराग्य अपने-आप आ जाते हैं। आगे अष्टावक्र ठीक यही सिखाएँगे।

एक और सुंदर बात है 'प्रभो' संबोधन। कथा के अनुसार अष्टावक्र उस समय बालक थे और उनका शरीर आठ स्थानों से टेढ़ा था। राजसभा के विद्वान उनका उपहास कर चुके थे। फिर भी राजा जनक उन्हें 'प्रभो' कहकर पुकारते हैं। यह विनम्रता ही ज्ञान का द्वार है — जो शरीर, आयु और रूप को देखकर नहीं, सत्य को देखकर झुकता है, वही सीखने का अधिकारी है।

जीवन में प्रयोग: आज कुछ क्षण शांत बैठकर स्वयं से जनक का ही प्रश्न पूछिए — मेरे पास जो कुछ है, उसके बाद भी मैं क्या खोज रहा हूँ? उत्तर लिखिए नहीं, बस प्रश्न के साथ बैठिए।

चिंतन: क्या मैं सत्य को केवल उसी से सीखने को तैयार हूँ जो बाहर से प्रभावशाली दिखे?

अष्टावक्र उवाच

मुक्तिं इच्छसि चेत्तात विषयान् विषवत्त्यज ।
क्षमार्जवदयातोषसत्यं पीयूषवद् भज ॥

muktiṃ icchasi cettāta viṣayān viṣavattyaja|
kṣamārjavadayātoṣasatyaṃ pīyūṣavad bhaja||

अन्वय

तात! चेत् मुक्तिम् इच्छसि (तर्हि) विषयान् विषवत् त्यज। क्षमा-आर्जव-दया-तोष-सत्यं पीयूषवत् भज।

शब्दार्थ

मुक्तिम् — मुक्ति को
इच्छसि — चाहते हो
चेत् — यदि
तात — हे प्रिय
विषयान् — इंद्रियों के भोगों को
विषवत् — विष के समान
त्यज — छोड़ दो
क्षमा — क्षमा
आर्जव — सरलता
दया — करुणा
तोष — संतोष
सत्यम् — सत्य
पीयूषवत् — अमृत के समान
भज — सेवन करो

हिंदी अनुवाद

अष्टावक्र बोले — हे प्रिय! यदि तुम मुक्ति चाहते हो तो विषयों को विष के समान छोड़ दो, और क्षमा, सरलता, दया, संतोष तथा सत्य का अमृत के समान सेवन करो।

jyotiyatra.in

भावार्थ एवं व्याख्या

अष्टावक्र का पहला उत्तर बहुत व्यावहारिक है। वे जनक को 'तात' कहते हैं — प्रेम का संबोधन, जैसे कोई बड़ा अपने प्रिय को समझाता है। गुरु का पहला कदम कठोरता नहीं, स्नेह है।

'विषयों को विष के समान छोड़ो' — इसका अर्थ यह नहीं कि भोजन, घर, परिवार सब त्याग दो। विष की पहचान यह है कि वह थोड़ी मात्रा में भी भीतर जाकर धीरे-धीरे जीवन को खा जाता है, और प्रायः स्वाद में मीठा होता है। विषयों की आसक्ति भी ऐसी ही है — आरम्भ में सुख देती है, फिर निर्भरता, चिंता और दुःख बन जाती है। त्याग वस्तु का नहीं, उस पर टिकी आसक्ति का करना है।

फिर पाँच अमृत बताए गए हैं — क्षमा, आर्जव (सरलता, कपट का अभाव), दया, संतोष और सत्य। ये पाँचों मन को शांत और पारदर्शी बनाते हैं। जिस मन में बदला, छल, कठोरता, लालच और असत्य भरा हो, उसमें आत्मज्ञान की बात टिक ही नहीं सकती। इसलिए अष्टावक्र पहले भूमि तैयार करते हैं।

परंपरागत व्याख्याकार इस श्लोक को साधन-चतुष्टय की संक्षिप्त झलक मानते हैं — विवेक और वैराग्य 'विषवत् त्यज' में, और शम-दम आदि गुण इन पाँच अमृतों में। ध्यान रहे, आगे के श्लोकों में अष्टावक्र और गहरे जाएँगे और कहेंगे कि तुम तो पहले से ही मुक्त हो; पर यह श्लोक बताता है कि उस सत्य को सुनने के लिए मन का निर्मल होना आवश्यक है।

jyotiyatra.in

जीवन में प्रयोग: पाँच अमृतों में से आज एक चुनिए — जैसे क्षमा। दिन भर में एक व्यक्ति को मन से क्षमा कीजिए, बिना उसे बताए।

चिंतन: मेरे जीवन में कौन-सा 'मीठा विष' है जो सुख देता दिखता है पर मुझे बाँधता है?

अष्टावक्र उवाच

न पृथ्वी न जलं नाग्निर्न वायुर्द्यौर्न वा भवान्।
एषां साक्षिणमात्मानं चिद्रूपं विद्धि मुक्तये॥

na pṛthvī na jalaṃ nāgnirna vāyurdyaurna vā bhavān|
eṣāṃ sākṣiṇamātmānaṃ cidrūpaṃ viddhi muktaye||

अन्वय

(त्वं) न पृथ्वी, न जलं, न अग्निः, न वायुः, न वा द्यौः (असि)। मुक्तये एषां साक्षिणं चिद्रूपम् आत्मानं विद्धि।

शब्दार्थ

पृथ्वी — पृथ्वी तत्व
जलम् — जल तत्व
अग्निः — अग्नि तत्व
वायुः — वायु तत्व
द्यौः — आकाश तत्व
वा — अथवा
एषाम् — इन सबका
साक्षिणम् — देखने वाला, साक्षी
आत्मानम् — अपने-आप को
चिद्रूपम् — चेतन-स्वरूप
विद्धि — जानो
मुक्तये — मुक्ति के लिए

हिंदी अनुवाद

तुम न पृथ्वी हो, न जल, न अग्नि, न वायु और न आकाश। मुक्ति के लिए अपने-आप को इन सबका साक्षी, चैतन्य-स्वरूप आत्मा जानो।

भावार्थ एवं व्याख्या

यहाँ से अष्टावक्र गीता का असली स्वर शुरू होता है। भारतीय दर्शन में शरीर को पाँच महाभूतों — पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश — से बना माना गया है। हड्डियाँ और मांस पृथ्वी, रक्त और रस जल, शरीर की ऊष्मा अग्नि, श्वास वायु और भीतर का खालीपन आकाश। अष्टावक्र एक-एक करके कहते हैं — तुम इनमें से कुछ नहीं हो।

यह कथन चौंकाने वाला लगता है, क्योंकि हम पूरे जीवन स्वयं को शरीर ही मानते आए हैं। पर एक सरल प्रयोग देखिए: आप अपने हाथ को देख सकते हैं, इसलिए आप हाथ नहीं, हाथ को देखने वाले हैं। आप अपनी श्वास को अनुभव कर सकते हैं, इसलिए आप श्वास नहीं, उसके जानने वाले हैं। जो कुछ भी देखा, जाना या अनुभव किया जा सकता है, वह 'दृश्य' है; और जो देखता है, वह 'द्रष्टा' या 'साक्षी' है। अष्टावक्र कहते हैं — तुम वही साक्षी हो।

'चिद्रूप' का अर्थ है जिसका स्वरूप ही चेतना है। चेतना कोई वस्तु नहीं जो आपके पास है; आप स्वयं चेतना हैं। शरीर बदलता है — बचपन, जवानी, बुढ़ापा — पर इन सब बदलावों को जानने वाला कभी नहीं बदला। वही अपरिवर्तनीय जानने वाला आपका वास्तविक 'मैं' है।

ध्यान दीजिए कि अष्टावक्र 'बन जाओ' नहीं कहते, 'विद्धि' — 'जानो' कहते हैं। मुक्ति कोई नई अवस्था पैदा करना नहीं, जो पहले से है उसे पहचानना है। यही अद्वैत वेदांत का सार है और यही इस पूरे ग्रंथ की धुरी है। आगे के श्लोक इसी पहचान को और गहरा करेंगे।

jyotiyatra.in

जीवन में प्रयोग: पाँच मिनट आँखें बंद करके बैठिए। शरीर की संवेदनाएँ, श्वास, विचार — जो भी आए, बस देखिए और भीतर कहिए: 'यह दिख रहा है, मैं देखने वाला हूँ।'

चिंतन: मेरे भीतर ऐसा क्या है जो बचपन से आज तक बिल्कुल नहीं बदला?

ॐ

यह नमूना यहीं समाप्त होता है

पूरी पुस्तक — सभी २९८ श्लोक, ६३५ पृष्ठ, आपके नाम के साथ — यहाँ से लें:

jyotiyatra.in/books/ashtavakra-gita